(IJASSH) 2019, Vol. No. 7, Jan-Jun **e-ISSN: 2455-5150, p-ISSN: 2455-7722**

PHILOSOPHY IN THE LITERATURE OF TULSIDAS

Dr Ranjeet Kaur

Associate Professor, Department of Education
Khunkhunji Girls' Degree College, Lucknow

तुलसीदास के साहित्य में दर्शन–शास्त्र

डॉ0 रंजीत कौर
एसोसिएट प्रोफेसर
शिक्षा–विभाग
खुनखुन जी गर्ल्स डिग्री कालेज
लखनऊ

'दर्शन' शब्द संस्कृत में 'दृश' धातु से बना है। 'दृश' का अर्थ है– 'देखना'– स्थूल नेत्र से तत्वों को देखना, सूक्ष्म नेत्र (प्रज्ञाचक्षु) से सूक्ष्म तत्वों को देखना। करण–व्युत्पत्ति से 'दर्शन' का अर्थ है– जिसके द्वारा देखा जाये अर्थात् ज्ञान प्राप्त किया जाये, भाव–व्युत्पत्ति से उसका अर्थ है– ज्ञान।[1]

अंग्रेजी में 'दर्शन' को 'फिलॉसफी' कहा जाता है। 'फिलॉसफी' शब्द यूनानी भाषा से आया है। यूनानी भाषा में दो भिन्न शब्द हैं– एक है 'फिलास' जिसका अर्थ है– प्रेम या अनुराग। दूसरा शब्द है – 'सोफिया' जिसका अर्थ है– विद्या या ज्ञान। इस प्रकार 'फिलासफी' शब्द का अर्थ हुआ– विद्यानुराग या ज्ञान प्रेम।[2]

'दर्शन' के व्युत्पत्तिपरक अर्थों के अनुसार दर्शन से अभिप्राय ज्ञान की खोज है। यह तो दर्शन का सामान्य अर्थ हुआ, जबकि विशिष्ट अर्थ में दर्शन का तात्पर्य उस अर्मूत चिन्तन से है, जिसके द्वारा आत्मा, परमात्मा, प्रकृति आदि का रहस्य मालूम किया जाता है । इस प्रकार दर्शन अपने विशिष्ट अर्थ में सत्य की खोज है। भारतीय दर्शन में भी सत्य का साक्षात् दर्शन किया जाता है, किन्तु सत्य के दृष्टा अपने अनुभव से हमें कुछ बातें बताया करते हैं । ऋषियों के इन वचनों में सत्य दृष्टा की अनुभूति छिपी हुई है अतः उससे व्यक्ति लाभ उठा सकता है। इन सब संचित अनुभवों को 'दर्शनशास्त्र' की संज्ञा दी जाती है, जो कि अब एक स्वतन्त्र विषय के रूप में सामने आया है।

दर्शनशास्त्र विषय के अन्तर्गत मुख्यतः ब्रह्य, जीव, जगत, माया, मोक्ष, आदि का विवेचन हुआ है। तुलसीदास के दर्शन सम्बन्धी विचार निम्नलिखित हैं : –

(IJASSH) 2019, Vol. No. 7, Jan-Jun **e-ISSN: 2455-5150, p-ISSN: 2455-7722**

ब्रह्म– *तुलसीदास ने श्रीराम को ब्रह्म स्वरूप माना है। उनके अनुसार ब्रह्म राम के दो रूप हैं – निर्गुण और सगुण–*

"अगुन सगुन दुइ ब्रह्म सरूपा। अकथ अगाध अनादि अनूपा।।[3]

तुलसी के राम निर्गुण[4]*, अगुण*[5] *गुणपार*[6] *हैं। वे अकल और अखंड और अनन्त*[7] *हैं । अरूप, अलख और अज*[8] *हैं। नित्य, निर्मम और नित्यमुक्त*[9] *हैं । व्योम व्यापक, निःसीम और अनादि*[10] *हैं।*

राम यदि गुणातीत हैं, तो वे गुण सागर, गुणनिधान और अमित गुणयुक्त[11] *भी हैं। श्रुतियाँ, शेष, शम्भु और सनकादि उनके गुणों का गान करते रहते हैं। इस प्रकार तुलसीदास निर्गुण और सगुण दोनों ही रूपों को परमार्थतः सत्य मानते हैं। वे आचार्य शंकर की भाँति निर्गुण ब्रह्म को अथवा वल्लभाचार्य की भाँति केवल सगुण ब्रह्म को ही पारमार्थिक सत्य नहीं मानते। तुलसी के अनुसार निर्गुण और सगुण अन्योन्याश्रित हैं। निराकार ब्रह्म भी भक्तवत्सल्ता, करुणा आदि गुणों से यक्त है और सगुण में भी निर्गुण का बीज निहित है। "**सगुण अगुन उर अंतरयामी**"*[13] *में भी यही भाव निहित है। तत्त्वतः निर्गुण और सगुण में कोई भेद नहीं है, यह केवल तुलसीदास ही नहीं अपितु मुनि, पुराण, बुध और वेद भी यही कहते हैं –*

सगुनहिं अगुनहिं नहिं कछु भेदा। गावहिं मुनि पुरान बुध बेदा।।[14]
जो निर्गुण है, वही भक्तों के प्रेम के वशीभूत होकर सगुण रूप हुआ है–
अगुन अरूप अलख अज जोई । भगत प्रेम बस सगुन सो होई।।[15]

अन्तर तत्त्व का नहीं वेश का है –

नयनन्हि को फल विसेष, ब्रह्म अगुन सगुन वेष ।
निरखहु तजि पलक, सफल जीवन लेखौ री।।[16]

जिस प्रकार का रूप–भेद दारुगत अव्यक्त आदि और दृश्यमान अग्नि में है[17]*, जल और हिम–उपल में है।*[18]*, अंक और अक्षर में है।*[19] *वैसा ही भेद निर्गुण और सगुण ब्रह्म में आभासित होता है।*

निष्कर्ष यह है कि ब्रह्म राम ही निर्गुण और सगुण, निराकार और साकार, अव्यक्त और व्यक्त, अंतर्यामी और बहिर्यामी, गुणातीत और गुणाश्रय तथा प्राकृत हेय गुण रहित और अप्राकृत विमल गुण सम्पन्न है।[20]

जीव– *तुलसीदास जी जीव को दो दृष्टिकोणों से देखते हैं।*[21] *मनोवैज्ञानिक दृष्टि से जीव अभिमानी जड़, परिच्छिन्न, परवश, सुखी–दुःखी और अज्ञानी–ज्ञानी है।*[22] *आतिभौतिक दृष्टि से वह नित्य, अविनाशी, चेतन, शुद्ध और सुखी है*[23]*, जीव मूलतः शुद्ध था जो मायावश बद्ध हो गया।*[24] *तुलसीदास के अनुसार माया के प्रभाव से जीव*

(IJASSH) 2019, Vol. No. 7, Jan-Jun **e-ISSN: 2455-5150, p-ISSN: 2455-7722**

इस प्रकार कलुषित हो जाता है जिस प्रकार भूमि के सम्पर्क से जल।[25] वह आत्म स्वरूप को भूलकर संसारी हो जाता है। यद्यपि माया का बन्धन मिथ्या है तथापि कोशकृमि, कीर और मर्कट की भाँति भ्रांत जीव माया का वशवर्ती होकर भवकूप में पड़ा हुआ अनेक प्रकार के क्लेश सहता है।[26] जिस प्रकार गंगा से निकला हुआ जल मदिरा के सम्पर्क से कलुषित हो जाता है, किन्तु गंगा में पुनः पहुँचकर पावनता प्राप्त कर लेता है, उसी प्रकार स्वरूपतः निर्मल अनाथ जीव ईश्वर से अलग और मायोपहित होने के कारण मोहग्रस्त हो जाता है, किन्तु ईश्वर की प्राप्ति होते ही पुनः स्वस्वरूपता प्राप्त कर लेता है।[27]

ईश्वर जीव का अंग है,[28] अतएव ईश्वर के स्वरूप–लक्षण से सम्पन्न है। वह चेतन, सुखराशि और नित्य है। ईश्वर की भाँति ही वह भी निर्विकार, निर्मल, निरंजन, और निरामय है। तथापि दोनों में तादात्म्य नहीं है। जीव ईश्वर नहीं है, ईश्वर के समान भी नहीं है । दोनों में शक्ति और मात्रा का बहुत भेद है।[29] जो ज्ञानाभिमानी जीव ईश्वर की बराबरी का दावा करता है वह कल्प भर नरक की दुर्गति भोगता है।[30]

जीव की तीन अवस्थाएँ हैं– जागृत, स्वप्न, सुषुप्ति।[31] निद्रा में जीव शिवतुल्य है, स्वप्न में वह सृष्टि करता है और जागृत अवस्था में जड़, दुःखी और सांसारिक हो जाता है।[32]

तुलसीदास के अनुसार जीव के 6 धर्म हैं। पार्वती की राम–विषयक भ्रान्ति का निराकरण करते हुए शंकर ने जीव के ये धर्म बतलाये हैं–

हर्ष, विषाद, ज्ञान अज्ञान, अहमिति और अभिमान।[33]

गोस्वामी जी जीव के परम्परागत चार प्रकार बताते हैं– उद्भिज, स्वेदज, अंडज, और जरायुज।[34]

तुलसीदास पुनर्जन्म में विश्वास करते हैं। उनके अनुसार जीव अपना जीर्ण शरीर उसी प्रकार मृत्यु के समय त्याग देता है, जिस प्रकार मनुष्य फटे–पुराने वस्त्रों को त्याग देता है।[35] ईश्वर से विमुख जीव काल, कर्म और स्वभाव के वश होकर भटकता डोलता है,[36] और अपने कमों के अनुसार जन्म–मरण के कष्ट अनेक योनियों में पाता है।[37]

गोस्वामी जी मानते हैं कि जीव एक बार माया के अधीन ही चार प्रकार की जीव कोटियों और चौरासी लक्ष योनियों में भ्रमण कर त्रितापों का अनुभव कर सुख–दुःख पाता रहता है। मानव के स्तर से तो योनि का निर्धारण कर्म के अनुसार होता है; विश्व के स्तर से, माया के द्वारा। जन्म–मरण के चक्र से मुक्ति रामकृपा से मिलती है और उसी कृपा से मुक्ति का अवसर भी प्राप्त होता है।[38]

(IJASSH) 2019, Vol. No. 7, Jan-Jun **e-ISSN: 2455-5150, p-ISSN: 2455-7722**

जगत– *तुलसीदास के अनुसार इस जगत् या सृष्टि की रचना स्वयं भगवान् ने की है। जैसा कि देवगण उनकी स्तुति करते हुए कहते हैं –*

''जेहि सृष्टि उपाई त्रिविध बनाई संग सहाय न दूजा।''[39]

यही बात दूसरे स्थान पर कही गयी है–''जड़ट चेतन गुण दोषमय विस्व कीन्ह करतार''[40], परन्तु एक अन्य स्थान पर तुलसीदास वाल्मीकि मुनि के माध्यम से सृष्टि की रचनाकर्त्री, माया या जानकी को बताते हैं–

श्रुति सेतु पालक राम तुम जगदीस माया जानकी।
जो सृजति जगु पालति हरति रुख पाय कृपानिधान की।[41]

और साथ ही स्पष्ट कर देते हैं कि माया भी यदि रचती है तो राम या ब्रह्म का रुख पाकर, उन्हीं के बल से। इसलिए राम ही वस्तुतः जगत् के उपादान और निमित्त कारण हैं। सृष्टि का प्रयोजन है भगवान् की लीला और जीव का कैवल्य। यह विश्व उनकी माया द्वारा रचित है। बह्मा आदि उन्हीं की शक्ति के प्रतीक हैं। यह सारा जगत राममय है।[42]

जगत् के स्वरूप के विषय में तुलसीदास ने तीन प्रकार की उक्तियाँ कही हैं–

1. *जगत् असत्य है।*
2. *जगत् राम का रूप है, अतः सत्य है।*
3. *जगत् को सत्य, झूठ या उभय रूप मानना तीनों ही भ्रम हैं।[43]*

तुलसी के अनुसार – जगत् असत्य[44], असत[45] , अविद्यमान[46] झूठ[47] या मृषा है[48]–

झूठो है, झूठो है, झूठो सदा जगु, संत कहत जे अंतु लहा है।

संकट ताको सहै सठ। संकट कसेटिक, काढ़त दंत, करंत हहा है।[49]

जगत् का मिथ्यात्व समझने के लिए तुलसी ने अनेक प्रकार के उपमानों या दृ ष्टांतों की योजना की है–

1. ***रजत सीय महुँ भास जिमि जथा भानुकर बारि।[50]***
2. ***जग नभ–वाटिका रही है फलि फूलि रे।[51]***
3. ***बूड्यो मृग बारि खायो जेवरी को सॉप रे।[52]***

(IJASSH) 2019, Vol. No. 7, Jan-Jun **e-ISSN: 2455-5150, p-ISSN: 2455-7722**

4. धुंआ कैसे धरौहर देखि तू न भूलि रे।[53]

*परन्तु साथ ही तुलसीदास ने राम को विश्व रूप, सचराचर रूप, विश्वास, विश्वायतन आदि कहकर और जगत् को राममय तथा उनका अंग, रूप आदि बतलाकर जगत् की नित्यता प्रतिपादित की है । **''बिधि प्रपंचु अस अचल अनादी'',***[54] *वसिष्ठ की यह उक्ति भी जगत् की शाश्वत प्रवाहमयता प्रमाणित करती है। भिन्न रूप में आभासित जो जगत् राम के अतिरिक्त नहीं है, वह असत् भी नहीं हो सकता। इस प्रकार तुलसीदास की दृष्टि में जगत् सत्य भी है ।*

वैसे यदि देखा जाए तो तुलसीदास को जगत् के सत्य, असत्य या सत्यासत्य मानने के प्रति कोई आग्रह नहीं है । वे तो इन तीनों को भ्रम मानते हुए कहते हैं –

कोउ कह सत्य झूठ कह कोऊ जुगल प्रबल कोउ मानै।

तुलसिदास परिहरै तीन भ्रम सो आपन पहिचानै।।[55]

अतएव निष्कर्ष यह है कि जगत् तत्वतः राम रूप है, परन्तु माया के कारण वह जीव को असत् और राम से भिन्न रूप में प्रतीत होता है।

माया– *इस विश्व–प्रपंच की बीज रूपा, ईश्वर की अपृथग्भूता, त्रिगुणात्मिका एवं अनिर्वचनीया शक्ति को 'माया' कहा गया। अर्थात् ''माया'' वह शक्ति है जो अघटित घटनापटीयसी तथा विचित्र कार्य करणशीला है और जिसकी निश्चयात्मिका प्रतीति अथवा निरूपण मानव बुद्धि के लिए अत्यंत दुस्साध्य है। उस शक्ति का कार्य यह प्रपंचात्मक विश्व भी माया ही है।*[56]

तुलसीदास के मतानुसार ब्रह्म राम की शक्ति का नाम 'माया' है। इसलिए राम 'मायापति' कहलाते हैं। उनकी व्यक्ताव्यक्त शक्ति रूपा माया को 'सीता' कहते हैं। तुलसी के रामभक्ति दर्शन में 'सीता' और 'माया' शब्द समशील भी हैं। जिस प्रकार राम के दो रूप हैं– साकार और निराकार, उसी प्रकार सीता के भी दो रूप हैं व्यक्त और अव्यक्त। अव्यक्त रूपा सीता के लिए तुलसीदास 'माया' शब्द का ही व्यवहार करते हैं किन्तु जब वही माया अपने व्यक्त साकार रूप में वाणी का विषय होती है तब उसे 'सीता' कहते हैं।[57] *जिस प्रकार निर्गुण–निराकार राम अवतार लेते हैं, उसी प्रकार उनके साथ उनकी 'माया' भी अवतार लेती है।*

राम की शक्ति स्वरूपा माया के दो भेद हैं – विद्या और अविद्या।

तेहि कर भेद सुनहु तुम्ह सोऊ। बिद्या अपर अविद्या दोऊ।।[58]

जीव के सम्बन्ध से, ''मैं देह से भिन्न चेतन आत्मा हूँ''– इस प्रकार की बुद्धि ''विद्या'' है जो संसार निवृत्ति का हेतु है।[59] *राम के सम्बन्ध से 'विद्या माया' राम की वह शक्ति*

(IJASSH) 2019, Vol. No. 7, Jan-Jun **e-ISSN: 2455-5150, p-ISSN: 2455-7722**

है जिसके द्वारा वे विश्व की रचना करते हैं अथवा जो उनकी प्रेरणा से जगत् की रचना करती है।[60] सत्व, रज और तम तीनों गुण वशवर्ती हैं। वह स्वयं शक्तिहीन हैं, उसकी शक्ति वस्तुतः प्रभु राम की ही शक्ति है। इन्द्रियां और इंद्रियगम्य समस्त जगत् माया है।[61] अर्थात् सृष्टि रचना करने वाली शक्ति और उस शक्ति का कार्य (यह अखिल ब्रह्माण्ड) सब माया है।

माया का दूसरा भेद अविद्या माया है। ''मैं देह हूँ''– इस प्रकार शरीर आदि अनात्म पदार्थो में देह बुद्धि 'अविद्या' है। दूसरे शब्दों में , मिथ्या को सत्य और सत्य को मिथ्या समझना ही 'अविद्या' है।[62] तुलसी के अनुसार यह अविद्या माया अत्यन्त दुष्ट और दुःख रूपा है, जो जीव को भव–कूप में गिरा देती है– ***''एक दुष्ट अतिसय दुख रूपा। जा बस जीव परा भव कूपा।।***[63] *यह अविद्या माया मोहकारिणी आवरण शक्ति है, जो धरती के ढाबर पानी की भाँति जीव को मलावृत किए हुए है।[64] अविद्या माया से आवृत मूढ़ जीव स्वस्वरूप और भगवत्स्वरूप को भूलकर भवबंधनबद्ध होता है। यह माया जिस कटक के द्वारा जीव को अपने अधीन करती है । वह बड़ा प्रचण्ड है और वह सर्वत्र व्याप्त है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, अहंकार, दम्भ, कपट, पाखण्ड इत्यादि विकार माया के सेनापति हैं, जिनमें से कोई न कोई जीव पर अधिकार कर से भव सागर में डुबा देता है।[65] यह माया अत्यन्त प्रबल है। इससे शिव और चतुरानन भी भयभीत रहते हैं, तो अन्य जीवों की गणना ही क्या है ?*

परन्तु इतनी प्रबल माया रघुवीर की दासी है और वह उनके भू विलास के समक्ष नटी के समान नृत्य करती रहती है।[66] वह बेचारी नर्तकी है तथा प्रभु के भय से उनके सामने हाथ जोड़कर खड़ी रहती है। इसीलिए तुलसी भगवान से निवेदन करते हुए कहते हैं –

अस कछु समुझि परत रघुराया।

बिनु तब कृपा दयालु दास हित मोह न छूटै माया।।[67]

<u>मोक्ष (मुक्ति)</u> – *सामान्यतः मुक्ति का अर्थ भव–बंधन से छूट जाना, संसृति–संकटों से छुटकारा मिलना, अविद्या का विनाश होना, जरा–मरण के कष्ट का समाप्त हो जाना, भव–सागर से पार हो जाना इत्यादि है । तुलसी ने भी जड़–चेतन की मृषा ग्रन्थि के खुल जाने, देह–जनित विकार त्यागकर आत्मानंद में लीन हो जाने तथा तुरीयावस्था में स्थित हो जाने को 'मुक्ति' कहा है।[68]*

तुलसी के मत से प्रधान रूप से मुक्ति दो प्रकार की है– जीवन मुक्ति और विदेह मुक्ति।

मुएं मुकुत जीवत मुकुत मुकुत मुकुत हूँ बीचु।[69]

(IJASSH) 2019, Vol. No. 7, Jan-Jun **e-ISSN: 2455-5150, p-ISSN: 2455-7722**

इसी जीवन में ज्ञानोदय होने से जो बन्धन मुक्त हो जाते हैं अर्थात् जिन्हें जरा–मरण का भय नहीं रहता, उन्हें जीवन मुक्ति प्राप्त हो जाती है और जो शरीर के नष्ट होने पर ब्रह्मलीन हो जाते हैं, उन्हें विदेह–मुक्ति प्राप्त होती है।

तुलसीदास किसी भी प्रकार की मुक्ति को महत्व नहीं देते । उनके लिए तो भक्ति ही मुक्ति है। भक्त को मुक्ति की आकांक्षा नहीं होती –

सगनोपासक मोच्छ न लेही, तिन्ह कहँ राम भगति निज देही।[70]

जो चतुर भक्त होते हैं, वे मुक्ति का निरादर करके भक्ति के प्रति लोभान्वित रहते हैं। क्योकि–

राम भजत सोइ मुकुति गुसाई, अनइच्छित आवइ बीर आई।।[71]

मुक्ति के साधन अनेक हैं –

*"**नाना पंथ निरबान के, नाना बिधान बहुभाँति।**"*[72] *इनमें भक्ति, ज्ञान, और कर्म का तुलसीदास ने स्पष्ट उल्लेख किया है। 'कर्म' साधन को तुलसीदास ने विशेष महत्व दिया है। उनके मत से 'कर्म' द्वारा जीव भवपाश से मुक्त नहीं हो सकता, क्योंकि –*

करतहुँ सुकृत न पाप सिराहीं, रक्त बीज जिमि बाढ़त जाहीं।[73]

ज्ञान तो अत्यन्त जटिल है। ज्ञान–दीपक प्रसंग में तुलसीदास ने ज्ञान मार्ग की दुरूहता का खुलकर वर्णन किया है। वे कहते हैं–

कहत कठिन समुझत कठिन साधत कठिन विवेक।
होइ घुनाच्छर माया जौं पुनि प्रत्यूह अनेक।।
ज्ञान पंथ कृपान कैं धारा। परत खगेस होइ नहिं बारा।।[74]

अतएव ज्ञान मार्ग अपनी दुरूहता के कारण साधारण जन के लिए साध्य नहीं है। तुलसी के मत से भक्ति का साधन ही सर्वश्रेष्ठ है । वे ही नहीं, अपितु–

श्रुति पुरान सब ग्रन्थ कहाहि, रघुपति भगति बिना सुख नाही।[75]

इसीलिए तुलसी दृढ़ता के साथ कहते हैं–

रामचन्द्र के भजन बिनु जो चह पद निरवान।
ज्ञानवंत अपि सो नर पसु बिन पूछ विषान।।[76]

भक्ति के भी अनेक रूप हैं । तुलसी ने राम के द्वारा लक्ष्मण और शबरी के प्रति नवधा भक्ति का विवेचन कराया है।

(IJASSH) 2019, Vol. No. 7, Jan-Jun **e-ISSN: 2455-5150, p-ISSN: 2455-7722**

सन्दर्भ–ग्रन्थ–सूची

1. डॉ0 उदय भानू सिंह, तुलसी दर्शन मीमांसा, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ, सं0–2018 वि0, पृ0 17.
2. डॉ0 राम शकल पाण्डेय, शिक्षा दर्शन, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, 1983.
3. तुलसीदास, रामचरितमानस, 1/23/1
4. वही, 1/205 दोहा.
5. वही, 7/111/1.
6. तुलसीदास, दोहावली, 114.
7. तुलसीदास, रामचरितमानस, 3/13/12.
8. वही, 1/116/2.
9. तुलसीदास, विनयपत्रिका, 53/6.
10. तुलसीदास, वैराग्य संदीपनी, 4.
11. तुलसीदास, रामचरितमानस, 1/285/3 तथा 6/11/9.
12. तुलसीदास, विनयपत्रिका, 52/1
13. तुलसीदास, रामचरितमानस, 3/11/3
14. वही, 1/116/1.
15. वही, 1/116/2.
16. तुलसीदास, गीतावली, 7/7/6.
17. तुलसीदास, रामचरितमानस, 1/23/2.
18. वही, 1/116/2
19. तुलसीदास, दोहावली, 252.
20. उदयभानु सिंह, पूर्वोक्त, पृ0 49.
21. रामदत्त भरद्वाज, गोस्वामी तुलसीदास, भारतीय साहित्य मन्दिर, फव्वारा, दिल्ली, 1962, पृ0, 384.
22. तुलसीदास, रामचरितमानस, 7, 113, 2–4, 187, 1, 139, 4, 4, 15, 3.
23. वही 7,66,2,4,12,3,7,197,1.
24. वही 7/197/2
25. तुलसीदास, रामचरितमानस, 4/15/3.
26 तुलसीदास, विनयपत्रिका, 136/1 तथा रामचरितमानस, 3/15/3.
27. तुलसीदास, रामचरितमानस, 1/70/1 तथा 3/365
28. वही 7/197/1.
29. वही 7/78/2–4
30. वही 1/69.
31. तुलसीदास, रामचरितमानस, 7/200 तथा दोहावली, 246.
32. तुलसीदास, दोहावली, 246
33. तुलसीदास, रामचरितमानस, 1/116/4
34. वही 7/118/4.
35. वही 7/180.
36. वही, 7/66/3.

37. वही, 2/12/2.
38. वही, 7/197/4.
39. वही, 1/185/छन्द 3.
40. वही, 1/6
41. वही, 2/25 छंद
42. उदयभानु सिंह, पूर्वोक्त, पृ0 146.
43. वही, पृ0 161.
44. तुलसीदास, रामचरितमानस, 1/118/1.
45. तुलसीदास, विनयपत्रिका, 120/4.
46. वही, 120/2
47. तुलसीदास, रामचरितमानस, 1/112/1
48. तुलसीदास, विनयपत्रिका, 120/1 तथा रामचरितमानस, 1/117
49. तुलसीदास, कवितावली, 7/39
50. तुलसीदास, रामचरितमानस, 1/117.
51. तुलसीदास, विनयपत्रिका, 66.
52. तुलसीदास, विनयपत्रिका, 73.
53. वही, 66.
54. तुलसीदास, रामचरितमानस, 2/282/3.
55. तुलसीदास, विनयपत्रिका, 111.
56. डॉ0 उदयभानु सिंह, पूर्वोक्त, पृ0 81–82
57. तुलसीदास, रामचरितमानस, 1/1 श्लोक 6, 2/126/छंद
58. वही, 3/15/2.
59. अध्यात्म रामायण, 2/4/33–34, 3/3/33.
60. तुलसीदास, रामचरितमानस, 3/15/3.
61. वही, 3/15/2.
62. तुलसीदास, विनयपत्रिका, 190/6.
63. तुलसीदास, रामचरितमानस, 3/15/3.
64. वही 4/14/13.
65. वही, 7/71/क.
66. वही, 7/72/1.
67. तुलसीदास, विनयपत्रिका, 123.
68. तुलसीदास, रामचरितमानस, 7/117/3 तुलसीदास विनयपत्रिका, 136
69. तुलसीदास, दोहावली, 225.
70. तुलसीदास, रामचरितमानस, 6/11/4.
71. वहीं, 7/118/4.
72. तुलसीदास, विनयपत्रिका, 192/4.
73. वही, 128.
74. तुलसीदास, रामचरितमानस, 7/118–119
75. वही, 7/121/7.
76. वही, 7/78.

(IJASSH) 2019, Vol. No. 7, Jan-Jun **e-ISSN: 2455-5150, p-ISSN: 2455-7722**

REFERENCES

1. Dr Uday Bhanu Singh, Tulsi Darshan Meemansa, Lucknow University, Lucknow, No. 2018, pg 17
2. Dr Ram Shakal Pandey, Shiksha Darshan, Vinod Pustak Mandir, Agra, 1983
3. Tulsidas, Ramcharitmanas, 1/23/1
4. Ibid, 1/205, Doha
5. Ibid, 7/111/1
6. Tulsidas, Dohavali, 114
7. Tulsidas, Ramcharitmanas, 3/13/12
8. Ibid, 1/116/2
9. Tulsidas, Vinaypatrika, 53/6
10. Tulsidas, Vairagya Sandipani, 4
11. Tulsidas, Ramcharitmanas, 1/285/3 and 6/11/9
12. Tulsidas, Vinaypatrika, 52/1
13. Tulsidas, Ramcharitmanas, 3/11/3
14. Ibid, 1/116/1
15. Ibid, 1/116/2
16. Tulsidas, Geetavali, 7/7/6
17. Tulsidas, Ramcharitmanas, 1/23/2
18. Ibid, 1/116/2
19. Tulsidas, Dohavali, 252
20. Udaybhanu Singh, Ibid, pg 49
21. Ramdutt Bhardwaj, Goswami Tulsidas, Bhartiya Sahitya Mandir, Favvara, Delhi, 1962, pg 384
22. Tulsidas, Ramcharitmanas, 7, 113, 2-4, 187, 1, 139, 4, 4, 15, 3
23. Ibid 7,66, 2, 4, 12, 3, 7, 197, 1
24. Ibid 7/197/2
25. Tulsidas, Ramcharitmanas, 4/15/3
26. Tulsidas, Vinaypatrika, 136/1 and Ramcharitmanas 3/15/3
27. Tulsidas, Ramcharitmanas, 1/70/1 and 3/365
28. Ibid 7/197/1
29. Ibid 7/78/2-4
30. Ibid 1/69
31. Tulsidas, Ramcharitmanas, 7/200 and Dohavali 246
32. Tulsidas, Dohavali, 246
33. Tulsidas, Ramcharitmanas, 1/116/4
34. Ibid 7/118/4
35. Ibid 7/180
36. Ibid 7/66/3
37. Ibid 2/12/2
38. Ibid 7/197/4
39. Ibid 1/185/Verse 3

40. Ibid 1/6
41. Ibid 2/25 Verse
42. Udaybhanu Singh, Ibid, pg 146
43. Ibid pg 161
44. Tulsidas, Ramcharitmanas, 1/118/1
45. Tulsidas, Vinaypatrika, 120/4
46. Ibid 120/2
47. Tulsidas, Ramcharitmanas 1/112/1
48. Tulsidas, Vinaypatrika, 120/1 and Ramcharitmanas 1/117
49. Tulsidas, Kavitavali 7/39
50. Tulsidas, Ramcharitmanas 1/117
51. Tulsidas, Vinaypatrika, 66
52. Tulsidas, Vinaypatrika, 73
53. Ibid 66
54. Tulsidas, Ramcharitmanas 2/282/3
55. Tulsidas, Vinaypatrika, 111
56. Dr Udaybhanu Singh, Ibid, pg 81-82
57. Tulsidas, Ramcharitmanas, 1/1 Shlok 6, 2/126/ Verse
58. Ibid 3/15/2
59. Adhyatm Ramayan, 2/4/33-34, 3/3/33
60. Tulsidas, Ramcharitmanas, 3/15/3
61. Ibid 3/15/2
62. Tulsidas, Vinaypatrika, 190/6
63. Tulsidas, Ramcharitmanas, 3/15/3
64. Ibid 4/14/13
65. Ibid 7/71/ka
66. Ibid 7/72/1
67. Tulsidas, Vinaypatrika, 123
68. Tulsidas, Ramcharitmanas, 7/117/3, Tulsidas Vinaypatrika, 136
69. Tulsidas, Dohavali, 225
70. Tulsidas, Ramcharitmanas, 6/11/4
71. Ibid 7/118/4
72. Tulsidas, Vinaypatrika, 192/4
73. Ibid 128
74. Tulsidas, Ramcharitmanas, 7/118-119
75. Ibid 7/121/7
76. Ibid 7/78